International Journal of Applied Research 2015; 1(5): 37-40

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 3.4
IJAR 2015; 1(5): 37-40
www.allresearchjournal.com
Received: 21-03-2015
Accepted: 12-04-2015

राघवेन्द्र
(शोधार्थी) संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

Correspondence:
राघवेन्द्र
(शोधार्थी) संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

महाभाष्य में प्रतिपादित नञ् समास

राघवेन्द्र

''प्रयोजनमनुद्दिश्य मन्दोऽपि न प्रवर्तते'' इस उक्ति के अनुसार मनुष्य अपने समस्त क्रिया कलापों को प्रयोजन के बिना नहीं करता है अर्थात् समस्त क्रियाओं के पीछे प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से कोई न कोई प्रयोजन अवश्य होता है। वैसे ही भाषा में 'समास' युक्त पदों का प्रयोग करने के पीछे भी प्रयोजन है क्यों कि 'समसनम् समास'[1] अनेक पदों का एक हो जाना ही समास होता है। 'संक्षेपः समासः' अर्थात् भाषा में संक्षिप्तता को भी समास कहते हैं। इत्यादि समास के अर्थों से प्रतीत होता है कि मनुष्य जब अल्प शब्दों में कोई बड़ी बात व्यक्त करना चाहता है। तो समास का प्रयोग करता है। क्योंकि महाभारत में कहा गया है

विस्तीर्यहि महज्ज्ञानमृषिः संक्षिप्य चाब्रवीत्।
इष्टं हि विदुषां लोके समास व्यासधारणम्।।[2]

सामान्य रूप से समास का विभाजन निम्न प्रकार से हैः–

1. अव्ययीभाव
2. तत्पुरूष
3. बहुब्रीहि
4. द्वन्द्व

पाणिनि अष्टाध्यायी के क्रमानुसार ''तत्पुरुषः'' सूत्र के अधिकार में 'नञ्' सूत्र आता है।

नञ् समास

'नञ्'[3] इस प्रकृत सूत्र में 'सह सुपा' की अनुवृत्ति है। और तत्पुरुष समास के अधिकार में यह सूत्र है।

अतः सुबन्त के साथ नञ्का समास हो और वह तत्पुरुष संज्ञक हो। सामान्य रूप से तत्पुरुष समास में उत्तरपद प्रधान होता है। इस दृष्टि से तो यह नञ् तत्पुरुष उत्तरपदार्थप्रधान होना चाहिए। परन्तु तत्पुरुष की उत्तरपदार्थप्रधानता पर भी विद्वानों ने आक्षेप किया है। और समास के चतुर्विध विभाजन का खण्डन किया है। इस प्रायोवाद की दृष्टि से यह निश्चय करना आवश्यक होगा कि नञ् समास में पूर्वपद या उत्तरपद की प्रधानता है। तथा नञ् का अर्थ क्या है। नञ्वाचक या द्योत्य है। ये निश्चय करना भी आवश्यक है। इन समस्त ऊहापोह स्थितियों के निवारणार्थ आचार्य पतञ्जलि ने नञ्सूत्र के व्याख्यान में विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की है।

नञ्सूत्र का व्याख्यान – नञ्समास युक्त अब्राह्मणः शब्द को जब प्रयोग करते हैं तो ब्राह्मण भिन्न ब्राह्मणसदृश का ज्ञान होता है। परन्तु इस समस्त 'अब्राह्मणः' पद या अन्य नञ् प्रयुक्त पदों में किसकी प्रधानता है। इस पर आचार्य पूर्वपक्ष रखते हुए कहते हैं।

1. अन्यपदार्थप्रधान
2. पूर्वपदार्थप्रधान
3. उत्तरपदार्थप्रधान

1. अन्यपदार्थप्रधान– ब्राह्मण शब्द से तात्पर्य ब्राह्मणत्व इस रूप में शब्द शक्त होगा तो 'अविद्यमान ब्राह्मण्यं यस्य सः ब्राह्मण।'[4] अर्थात् जिसमें ब्राह्मणत्व नहीं है वह क्षत्रिय आदि होगा।

2. पूर्वपदार्थप्रधान – पूर्वपदार्थप्रधान होने पर नञ् यहाँ भेदसामान्य का वाचक होगा। ब्राह्मणादि विशेषित करने पर पूर्वपदार्थ का प्राधान्य होगा।[5]

3. उत्तरपदार्थप्रधान – यहाँ नञ् के द्वारा ब्राह्मणपदार्थ की निवृत्ति होगी तो उत्तरपदार्थप्रधान होगा।[6]

आक्षेप–समाधान

1. उत्तरपदार्थप्रधानसंबंधी आक्षेप – यदि उत्तर पदार्थ को प्रधान मानोगे तो 'अब्राह्मणमानय' ऐसा कहने पर ब्राह्मण का आनयन होगा 'अब्राह्मण' का नहीं।

2. अन्यपदार्थप्रधान – उत्तरपक्षी आचार्य कहते हैं कि यदि उत्तरपदार्थ प्रधान में समस्या है तो अन्य पदार्थ प्रधान में 'अविद्यमानं ब्रह्मण्यं यस्य सः अब्राह्मणः'[7] ऐसा प्रयोग करने पर अन्यपदार्थ क्षत्रिय आनयन में कोई दोष नहीं रहेगा।

आक्षेपक – ''अवर्षा हेमन्त''[8] यदि अन्य पदार्थ को प्रधान मानते हो तो 'अवर्षा हेमन्तः' इस प्रयोग में हेमन्तः इत्यादि का प्रधान्य होगा।

हेमन्तः का प्राधन्य होने पर 'अवर्षा' पद भी हेमन्तः के कारण पुल्लिंङ्ग हो जायेगा।

3. पूर्वपदार्थप्रधान्य[9] – अब जब अन्य पदार्थ प्रधान्य में समस्या है तो पूर्वपदार्थ का प्रधान्य मान लेते हैं। जिसमें नञ् को ब्राह्मणादि से विशेषित करके 'अब्राह्मण' का पूर्वपद अव्यय है। इस कारण समस्त अब्राह्मण की ही अव्यय संज्ञा हो जायेगी। 'अव्ययादाप्सुपः' इस सूत्र से अव्ययसंज्ञक से विभक्ति इत्यादि का लुक् हो जायेगा। जिससे 'अवर्षा हेमन्तः' में होने वाली लिंङ्ग संबंधी समस्या की उत्पत्ति ही नहीं होगी।

पूर्वपदार्थप्रधान में सम्भावित दोष वारणोपाय

पूर्वपदार्थ का प्रधान्य मानने पर जो 'अवर्षा हेमन्तः' इस प्रयोग में आप लिंङ्गत्व की समस्या का जो समाधान कर रहे हैं। यह समस्या तो फिर भी होगी क्योंकि 'स्वरादि निपातमव्ययम्' इस सूत्र से जो अव्यय संज्ञा हो रही है वह तो स्वरादि गण में पठित 'नञ् अव्यय की है क्योंकि 'अब्राह्मणः' ऐसा पद तो स्वरादिगण में पठित नहीं है।

दोषावारण – 'नैषदोषः' इसमें दोष नहीं है। 'नञ्' स्वरादिगण में पठित है इसलिए इसकी अव्यय संज्ञा होगी और नञ् 'अब्राह्मणः' इत्यादि प्रयोगों में प्रधान है। क्यों कि पूर्वपदार्थप्राधान्य है। और नञ् में तो किसी लिंङ्ग और संख्या विभक्ति आदि का अन्वय नहीं होगा। इसी कारण 'अब्राह्मणः' में नञ् की प्रधानता होने से समस्त 'अब्राह्मण' पद में भी लिंङ्ग, संख्या, आदि का अन्वय नहीं होगा।

दोष– 'नेदम्' 'अब्राह्मणः' पूर्ण समस्त पद में लिंङ्ग संख्या का अन्वय नहीं होगा ऐसा नहीं हो सकता क्यों कि वाक्य में तो पद असत्वरूप अर्थ के बोध्क होते हैं। और वाक्य ही सत्वरूप अर्थ का बोधक है। क्योंकि 'वाक्यं हि भाषा' ऐसा कहा जाता है। इसीलिए ये स्थिति वाक्य में हो सकती है। परन्तु समास में पद सत्वरूप अर्थ का बोधक होता है।

उदाहरण से स्पष्ट करते हैं। एक कक्षा में एक ही समय में एक ही अध्यापक द्वारा विषय पढ़ाये जाने पर उस समय में उपस्थित कुछ तीक्ष्ण बुद्धि छात्रों को पाठ शीघ्र और अधिक ग्रहण होता है। परन्तु मध्य बुद्धि सामान्य छात्रों को कुछ कम ग्रहण होता है। और मन्द बुद्धि छात्रों को किञ्चिन्मात्र ग्रहण होता है। ठीक उसी तरह समास से पूर्व नञ् अव्यय में लिंङ्ग संख्या का योग नहीं होगा। परन्तु समास के पश्चात् जो पद है उसमें लिंङ्ग और संख्या का अन्वय होगा। क्योंकि ऐसा शब्दशक्ति स्वभाव है।

'आश्रयतो वा लिंङ्गवचनानि'[10] गुणवाचक शब्द का जो लिंङ्ग वचन है वह द्रव्य पर आश्रित होता है। जैसे– 'शुक्लं वस्त्रम् शुक्ला शाटी, शुक्लः कम्बलः शुक्लौ कम्बलौ, शुक्लाः कम्बला।'[11] इत्यादि प्रयोगों ये गुणवाची शुक्ल पद है। उसमें सभी प्रयोगों में जो द्रव्य वस्त्र, कम्बल, इत्यादि के लिंङ्ग वचन है उनके अनुसार शुक्ल पद के भी लिंङ्ग वचन है इस दृष्टि से विचार करने पर भी 'अवर्षा हेमन्तः' इत्यादि प्रयोगों में लिंङ्ग और संख्या की समस्या रहेगी।

उत्तरपदार्थप्राधान्य की पुनः स्थापना तथा नञर्थ अथ वा पुनरस्तु उत्तरपदार्थप्रधान।[12]

पूर्वपदार्थप्रधान्य, अन्यपदार्थप्रधानय मानने से समस्या उत्पन्न हो रही है। इसलिए उत्तर पदार्थप्रधान ही मानना चाहिए। परन्तु जो पूर्वपक्षियों द्वारा समस्या उपस्थापित की गई उसका समाधन यह है। जैसे– 'राजपुरुष' इस का प्रयोग करने पर राजविशेषणाविशिष्ट पुरुष का आनयन होता है न कि पुरुषमात्र का क्योंकि 'राजपुरुषः' में राज पद विशेषण है। ठीक उसी प्रकार 'अब्राह्मणः' में उत्तरपदार्थप्रधान होने पर भी नञ्पदार्थ भेदक है। अतः विशिष्ट उत्तरपदार्थ का ही आनयन होगा। केवल उत्तरपदार्थ का नहीं।

अब आक्षेपक कहता है कि नञ् क्या है। और उसकी विशिष्टता क्या है।

नञ् का अर्थ – 'निवृत्तपदार्थकः'[13] निवृत्तः पदार्थो मुख्यं ब्राह्मण्यं यस्मिन् स निवृत्तपदार्थकः जिसमें मुख्य पदार्थ ब्राह्मण्य आदि की निवृत्ति हो वह निवृत्तपदार्थक है। वह ब्राह्मणाभिन्नब्राह्मण सदृश क्षत्रिय आदि होगा अब प्रश्न है कि जो नञ्पद की निवृत्ति हो रही है। वाचिनिकी है या स्वभाविकी है इससे यह भी सिद्ध होगा कि नञ् पद यहाँ द्योत्य है या वाच्य है। 'अब्राह्मणः' इस प्रयोग में उत्तरपदार्थ ब्राह्मण की जो निवृत्ति हो रही है। उसका नञ् के द्वारा द्योतन हो रहा है। अब प्रश्न है यह निवृत्ति स्वभाविकी है तो समास में उसकी निवृत्ति रूचतः हो जायेगी उसके लिए नञ् पद का प्रयोग करना निरर्थक है। यदि वाचिनिकी है 'तो नञ् प्रयुज्यमानः पदार्थ निवर्तयति' ति। अर्थात् प्रयुज्य नञ् ही पदार्थ की निवृत्ति करता है ऐसा कहना चाहिए। उत्तर देते हुए आचार्य कहते हैं। 'स्वाभाविकी निवृत्ति'[14] नञ् से जो निवृत्ति हो रही है वह स्वाभाविकी है। क्यों कि प्रयुज्यमान नञ् भी पदार्थ की निवृत्ति कराता है जैसे– 'कीलप्रतिकीलकवत्'[15] जैसे बड़े कील कांटों के द्वारा छोटे कील, कांटे उखाड़े जाते है ठीक वैसे ही क्षत्रिय में सादृश्य आदि के द्वारा उत्पन्न ब्राह्मणज्ञान की निवृत्ति नञ् पद के प्रयोग द्वारा होती है। अब प्रश्न है कि यदि नञ् प्रयुज्यमान भी उत्तरपदार्थ ब्राह्मण की निवृत्ति करा देता है जैसे– कीलप्रतिकीलवत्। फिर तो नञ् इतना शक्तिशाली हो गया कि नञ् के कहते ही एक शत्रु राजा की समस्त सेना की निवृत्ति हो जायेगी। फिर तो उसे सेना अश्व, हाथी रखने की आवश्यकता ही नहीं है। उत्तर देते हुए आचार्य कहते हैं कि वह उत्तरपदार्थ ब्राह्मण की निवृत्ति स्वभाविकी मानिए और आप कहते है कि फिर नञ् का प्रयोग क्यों करते हैं। इसका उत्तर 'नञ्निमित्तातूपलब्धि'[16] यहां नञ् निवृत्ति का निमित्त है जैसे– 'अन्धकार में रखी गई वस्तु की उपलब्धि दीपक द्वारा होती है। दीपक उन वस्तुओं का प्रकाशक मात्र है न कि उत्पादक है। ठीक उसी प्रकार स्वभाविक

निवृत्त पदार्थ का नञ् द्योतन करता है। पूर्वपक्षी कहता है कि आप ये मानते हो कि उत्तरपदार्थ निवृत्त है। तो फिर इस उत्तरपद 'अब्राह्मण' पद में ब्राह्मण पद का प्रयोग क्यों करते हो। उत्तर– 'अस्य पदार्थों निर्वतति'[17] इससे इस पदार्थ की निवृत्ति हुई इस बोध के लिए प्रयोग करते हैं। यदि ब्राह्मण पद का प्रयोग नहीं करेंगे तो सन्देह होगा कि निवृत्ति किसकी हुई। इस सन्देह के निवारण के लिए करते हैं।

नञ् का अर्थ द्योतकत्व है क्योंकि 'गुणशब्द पराक्षप धर्म का वाचक है। अतः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र यह धर्मशास्त्र में शक्त है। जिसके धर्म की स्वभाविकी निवृत्ति नञ् पद से होती है। उसका प्रयोग होता है।

धर्मशास्त्र का उदाहरण देते हुए स्पष्ट करते है।

'तपःश्रुतं च योनिश्चेत्येतद् ब्राह्मणकारकम्।'[18]
तपः श्रुताभ्या यो हीनो जाति ब्राह्मण स्व सः।।

यहाँ गुणहीन होने पर ब्राह्मण और ब्राह्मणी से उत्पन्न होने पर ब्राह्मण व्यवहार होता है।

इसी प्रकार तपःश्रुत के अभाव में भी निन्दा के लिए यहाँ अब्राह्मण शब्द का प्रयोग है। यहाँ नञ् पद के द्वारा निवृत्ति द्योत्य है।

सन्देह वश भी जातिहीन व्यक्ति में भी ब्राह्मण शब्द का प्रयोग होता जाता है। क्योंकि उस व्यक्ति के गुण ब्राह्मण जैसे प्रतीत होते हैं। परन्तु अन्य प्रमाण के द्वारा जाति का अभाव बोध होता है। तब उसके द्योतन के लिए नञ् पद का प्रयोग होता है। और उसको 'अब्राह्मणोऽयम्' कहते है।

'दुरुपदेश'[19] किसी के द्वारा ब्राह्मण बुलाने को कहा जाता है। परन्तु उस निश्चित स्थान पर वह ब्राह्मण को छोड़कर किसी और को ब्राह्मण समझ के ले आता है। बाद में धर्म के आधार पर निश्चय करता है यह ब्राह्मण नहीं है।

यहाँ धर्मसमुदाय का अभाव ही अब्राह्मण से ब्राह्मण की निवृत्ति कराता है। यहाँ ब्राह्मण धर्म के अभाव का द्योतन नञ् से होता है।

इस प्रकार विभिन्न दृष्टियों से विचार करने पर सिद्ध होता है। नञ् समास में द्योतन करने का कार्य करता है।

अब आचार्य उत्तर पदार्थ की सिद्धि के लिए 'अनेकम्'[20] उदाहरण प्रस्तुत करते है। 'न एकम् अनेकम्' इस नञ् समास में उत्तरपदार्थ एकवचन का प्रधान्य भी संग्रहीत होता है। उत्तरपदार्थ के प्रधान्य होने पर ही एकवचन संख्याश्रय सिद्ध होता है। आक्षेपक कहता यह कैसे? आचार्य कहते हैं कि प्रसज्यप्रतिषेध में नञ् पद गुण क्रिया को आश्रय कर द्रव्य की निवृत्ति कराता है। और गुण क्रिया कभी निराश्रित नहीं रहते। अतः उसका आश्रय अनियतसंख्याद्रव्य का आक्षेप होने पर एक निषेध होने पर बहुत का बोध हो जायेगा। परन्तु पर्युदास प्रतिषेध में अनेक शब्द का अर्थ द्वित्व संख्या युक्त है। जैसे 'अब्राह्मणः' प्रयोग क्षत्रिय आदि में ब्राह्मणत्व का आरोप कर निषेध किया जाता है। वैसे ही एकत्व में द्वित्व बहुत संख्या का आरोप कर निषेध किया जाता है। जिस प्रकार अब्राह्मण शब्द से क्षत्रियादि वाच्य है। ठीक उसी तरह अनेकम् समस्त पद से द्वित्व, बहुत्व संख्या वाच्य है। जैसा कि लोक में प्रस्तुत होता है। 'आसय, शायय, भोजय, अनेकमिति'[21] यहाँ अनेक बैठते है। अनेक भोजन करते हैं। अनेक शयन करते है। गुण इत्यादि में भी 'अनेकस्मिन् रूपं रसः' यह गुण का उदाहरण है।

आक्षेपक– जहाँ क्रिया और गुण का विधान पहले हो रहा हो वहाँ तो बहुत्व का बोध हो सकता है। परन्तु जहाँ क्रिया का विधान निषेध के पश्चात् हो रहा हो। तो कैसे बहुत्व का बोध होगा। आचार्य उत्तर देते है कि आख्यात का प्रयोग पहले या बाद में हो धात्वर्थ के द्वारा कारक का आक्षेप अवश्य होता है। वहाँ एक निषेध से ही द्वित्व अन्वयी साधन का आक्षेप होता है। उदाहरण से स्पष्ट करते हैं। जैसे लोक में कहते हैं 'न एकं प्रियं, न न एकं सुखम्'[22] यहाँ एक निषेध होने पर द्वित्व आदि का बोध होता है।

इस तरह जहाँ वाक्य में सामर्थ्यवश अन्यसंख्या की गति होती है। वहाँ समास वाक्य विलक्षण धर्मप्रार्दुभाव क्यों नहीं होगा।

निष्कर्ष

इस प्रकार आचार्य पतञ्जलि ने उक्त दोषों का समाधान करते हुए नञ् समास में उत्तर पदार्थ की प्रधानता और नञर्थ की स्थापना की।

उपसंहार

अष्टाध्यायी के क्रमानुसार ' नञ्'[23] सूत्र 'तत्पुरुषः' के अधिकार में है। इसमें सुप्, सह सुपा, समासः की अनुवृत्ति आ रही है। तत्पुरुष के अधिकार में होने के कारण नञ् से होने वाला समास तत्पुरुष संज्ञक होगा और तत्पुरुष में उत्तरपद की प्रधानता मानी जाती है। इस दृष्टि से उत्तरपद के प्रधान्य की सिद्धि करना आचार्य के लिए आवश्यक था। तथापि अन्यत्र 'असर्वस्मै' इत्यादि प्रयोगों की सिद्धि में भी उत्तरपदार्थ प्रधान्य के अभाव में सम्भव नहीं है। क्यों कि यदि उत्तर पद यदि गौण (उपसर्जन) होगा तो इसकी सर्वनाम संज्ञा नहीं हो सकती और सर्वनाम संज्ञा के अभाव में 'सर्वनाम्नः स्मै'[24] इस सूत्र के द्वारा 'ङे' के स्थान में 'स्मै' आदेश नहीं होगा। तो 'असर्वस्मै' इत्यादि प्रयोग नहीं बनेगे। इस दृष्टि से विचार करने से यही सिद्ध होता है कि आचार्य पतञ्जलि द्वारा नञ् समास में उत्तरपदार्थ के प्रधान्य की सिद्धि पाणिनि व्याकरण के लिए पूरक है तथा लोक में प्रयुक्त उदाहरणों से भी युक्तियुक्त रूप से पुष्ट है।

संदर्भ

1. प्रक्रिया कौमुदी
2. महाभारत आदिपर्व 1/5
3. लघुसिद्धान्तकौमुदी, सू. 946
4. व्याकरणमहाभाष्य सू. 2.2.6
5. व्याकरणमहाभाष्य सू. 2.2.6
6. व्याकरणमहाभाष्य सू. 2.2.6
7. व्याकरणमहाभाष्य सू. 2.2.6
8. व्याकरणमहाभाष्य सू. 2.2.6
9. व्याकरणमहाभाष्य सू. 2.2.6
10. व्याकरणमहाभाष्य सू. 2.2.6 वा. 1, पृ. 189
11. व्याकरणमहाभाष्य सू. 2.2.6 वा. 1, पृ. 189
12. व्याकरणमहाभाष्य, पृ. 189
13. व्याकरणमहाभाष्य, पृ. 189
14. व्याकरणमहाभाष्य सू. 2.2.6, पृ. 191
15. व्याकरणमहाभाष्य सू. 2.2.6, पृ. 191
16. व्याकरणमहाभाष्य सू. 2.2.6, पृ. 191
17. व्याकरणमहाभाष्य सू. 2.2.6, पृ. 192
18. व्याकरणमहाभाष्य सू. 2.2.6, पृ. 191
19. व्याकरणमहाभाष्य सू. 2.2.6, पृ. 193
20. व्याकरणमहाभाष्य सू. 2.2.6, पृ. 195
21. व्याकरणमहाभाष्य सू. 2.2.6, पृ. 195

22. लघु सिद्धान्तकौमुदी, सू. 946
23. लघु सिद्धान्तकौमुदी, सू. 922
24. लघु सिद्धान्तकौमुदी, सू. 143

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. लघु सिद्धान्तकौमुदी– सं. डॉ. सत्यपाल सिंह, परिमल प्रकाशन, दिल्ली
2. प्रक्रिया कौमुदी
3. समास वृत्ति विमर्शः, डॉ. विजय प्रसाद त्रिपाठी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, बनारस
4. वैयाकरण भूषणसार, कौण्डभट्ट, सं. मधुसूदन पीना, दिल्ली
5. व्याकरणमहाभाष्य; द्वितीयोऽध्यायः, पतञ्जलि, सं. डॉ. हरि नारायण तिवारी, चौखम्बा विद्याभवन, बनारस